(कोंकणी कहानी)

उदक

■ प्रकाश पर्येकार
अनु. : रवींद्रनाथ मिश्र

आज कापशें गाँव के नल में पानी नहीं आया। रोज सुबह दस बजे ही पानी आ जाता था। दोपहर के दो बज गए। अभी तक नल सूखा पड़ा है। गाँव की औरतें नल में पानी की राह देख रही हैं। साते पहाड़ी की घाटी में पाइप लाइन फूट गई है जिसे ठीक होने में कम से कम दो दिन जरूर लगेंगे। नल में पानी छोड़ने वाला शंकर गाँव आकर चला गया। यह खबर गाँव के दोनों बाड़े (पुरवे) में फैल गई। घर–घर में पानी की ही चर्चा हो रही है।

पहले गाँव में दो सार्वजनिक नल थे। एक ऊपर के बाड़े में तो दूसरा नीचे के। नल में पानी आते ही भीड़ मच जाती थी। कारण, सब लोगों को पानी चाहिए। औरतों का बावेला। आपस में झगड़ा। बाद में गालियाँ....।

इस झगड़े झमेले से बचने के लिए गाँव के अधिकांश लोगों ने अपने–अपने घर में नल लगवा लिए। जिन्होंने नल नहीं लिया, वे सब सार्वजनिक नल के पानी का इस्तेमाल करते हैं। मुख्य पाईप लाइन आज सुबह फूट गई, जोकि जंगल से होकर पहाड़ के ऊपर मुख्य टैंक तक जाती है। इस टैंक में इकट्ठा हुआ पानी बाद में गाँव के लिए छोड़ा जाता है।

पिछले कई वर्षों से मुख्य पाइप लाइन बार–बार फूट रही है, जिसके कारण गाँव में पानी के लिए अफरा–तफरी मच जाती है। वही हाल आज भी है। लोग पानी की राह देखेंगे। ऊपर से यह मई का महीना। भीषण गर्मी। उफ्फ! सब कुछ जल रहा है। शरीर के अंग–अंग भी गरम तवे की भाँति।

बारिश के दिनों में मंदिर के पास का यह नाला पानी से डबाडब भरा हुआ बहता है। कपड़े धोना, नहाना, बर्तन साफ करना आदि काम इसी नाले से ही होता है। दीवाली के दिन आते–आते यह नाला सूख जाता है। कापर्शे गाँव में इस नाले के सिवा पानी का और कोई जरिया नहीं है। यहाँ से आधे घंटे चलने के बाद कळटी नदी है जहाँ आने–जाने में एक घंटा लगता है।

सखाराम, उदय, गोकुलदास, बातू और शाबलो ने अपनी–अपनी मोटर साइकिलें एवं साइकिलें बाहर निकालीं। मर्दों ने प्लास्टिक के गैलेन लिए। औरतों ने बड़ी–बड़ी गागरें और बच्चों ने छोटे–छोटे तपेले। घर–घर में दो–दो, तीन–तीन लोग जलती धूप में कळटी नदी की ओर चल पड़े। वहाँ से पानी लाते समय बच्चे पसीने से तर..... मर्द बेदम..... और औरतें हाँफ रही थीं।

दूसरे दिन गाँव के लोग आग–बबूला हो गए। शंकर साइकिल से कहीं जा रहा था तो अचानक उसकी मुलाकात गाँव के लोगों से हो गई। औरतों ने उसे रोका। उसे देखते ही अन्य औरतें जमा हो गईं। "पानी क्यों नहीं छोड़ा?" यह कहते हुए सारी औरतें मानो बर्रे की भांति उस पर टूट पड़ीं।

"अभी पानी के लिए और कितने दिन राह देखनी पड़ेगी? नदी से पानी लाते–लाते जान जा रही है।"

"तुम लोगों की ही नहीं, बल्कि सारे गाँव की यही हालत है। पाइप आज भी ठीक नहीं हुआ। पानी आने के बाद तुरंत छोड़ूंगा।" शंकर गुस्से में बोला।

"पानी कब आएगा? खाना पकाने के लिए भी पानी नहीं है।"

"नहाने के लिए पानी नहीं है।"

"कपड़े धोने के लिए पानी नहीं है।"

"पानी के कारण पेड़–पौधे सूख रहे हैं।"

"हमारी गाय–भैंसों के लिए भी पानी नहीं है।" सभी औरतों ने अपनी–अपनी मुसीबतें शंकर को बताईं। "तुम लोग ये सब मुझे क्यों सुना रही हो? इंजीनियर के कार्यालय में जाकर शोर मचाओ।" अपने ऊपर औरतों का गुस्सा देखकर शंकर को क्रोध आया। वह पड़ोस के गाँव में रहता है। शंकर पिछले चार वर्षों से आसपास के गाँवों में पानी छोड़ने का काम करता है।

"अरे! तुम लोग इस बेचारे पर गुस्सा क्यों कर रहे हो? क्या वह टूटी हुई पाइप ठीक करता है? पानी आएगा तो छोड़ेगा।" ठीक उसी समय दत्ता वहाँ पँचा। उसने औरतों को समझाया। इस तरह शंकर की जान छूटी। इसी दरम्यान वहाँ के अन्य कई लोग आ गए।

"हाँ! शंकर जैसा कहता है हमलोग वैसा ही करेंगे।"

तुलसीदास ने अपना मत व्यक्त किया।

"सरपंच को भी बुलाओ। तुम्हारी बात वहाँ कौन सुनेगा।?" किसी ने ऊँची आवाज में कहा।

"सरपंच क्यों? अरे! उसे इतनी पड़ी होती तो गाँव में आकर हमारी खोज–खबर लेता।" तुलसीदास ने सरपंच के ऊपर अपना गुस्सा उतारा।

"इंजीनियर हमारी बात क्यों नहीं सुनेगा? क्या हम पानी का बिल नहीं चुकाते?" कस्तूरीबाई बड़बड़ाती हुई गुस्से में बोली। उसी वक्त यह तय हुआ कि कल हमलोगों का एक समूह इंजीनियर के कार्यालय में जाएगा। दूसरे दिन सभी इंजीनियर से मिले।

"देखिए, अभी टूटे हुए पाइप को ठीक करने में दो दिन और लगेंगे। मैं सुबह तुम लोगों के लिए पानी का टैंकर भेज दूँगा।" ऐसा कहकर उसने सभी लोगों को जाने के लिए कहा। दूसरे दिन ठीक दस बजे पानी का टैंकर गाँव पहुँच गया। घड़ा, गागर, बाल्टी, भगोना, तसला आदि लेकर पूरा गाँव टैंकर के चारों ओर इकट्ठा हो गया। पानी लेने के लिए सभी लोग एक साथ टूट पड़े। छोटे बच्चे लोटा और भगोना लेकर टैंकर के आसपास नाचने लगे। औरतें अपने–अपने बर्तनों को भरने के लिए धक्का–मुक्की करने लगीं..... दूसरे गाँववालों को भी पानी चाहिए यह कहते हुए उसने सब लोगों को थोड़ा–थोड़ा पानी दिया और दूसरे गाँव की ओर चल पड़ा। कई बर्तन खाली ही पड़े रह गए। यह देखकर बौखलाई हुई औरतें गुस्से में आकर टैंकर वाले को गालियाँ बकने लगीं।

"वह मुआ हमें पानी क्या देगा? देखो एक घड़े पानी से क्या होगा?" ऊपर बाड़े वाली राजर्गे गुस्से में तमतमाई हुई बोली।

"हमें यहीं उसकी गाड़ी पंचर कर देनी चाहिए थी। इससे सब पानी हमें ही मिल जाता।" कई नौजवान गुस्से में आकर बोले।

"पानी का एक घड़ा भी ज्यादा नहीं दिया.... बाघ खा जाए उसे। आने दो कल, मैं उसे अच्छी तरह सबक सिखाऊँगी।" नीचे बाड़े वाली आबड़ू मन ही मन बड़बड़ाने लगी।

दूसरे दिन टैंकर नहीं आया। फिर वही हल्ला–गुल्ला, भाग–दौड़। टैंकर की राह देख–देख कर फिर लोगों ने कळटी नदी की राह पकड़ी। दो दिन

में पानी आएगा, ऐसा इंजीनियर ने कहा था लेकिन आज पाँचवें दिन भी नल में पानी नहीं आया.....।

"पानी का पाइप ठीक हो गया है। रात को नल में पानी कभी भी आ सकता है।" यह खबर शंकर शाम को गाँव में देकर गया। जिसे सुनते ही गाँव के लोग झूम उठे। सभी लोगों ने अपने–अपने नल की टोटी खोलकर रखी। कई औरतें नल के पास जा–जाकर आने लगीं। उनको मालूम है कि नल में पानी आने के पहले उसमें शूं SSS, शूं SSS की आवाज आती है लेकिन ऐसा कुछ नहीं हो रहा था।

पानी के इंतजार में आधी रात बीत गई। हल्की–सी चाँदनी बिछी हुई थी। कपार्शे गाँव अभी तक जाग रहा था। गर्मी का मौसम होने के कारण लोग अपने–अपने आँगन में लेटे हुए थे। उनकी आपस में बातें हो रही थीं। यदि रात में पानी आकर चला गया तो शंकर कल सुबह फिर पानी नहीं छोड़ेगा। चिंता के मारे दोनों बाड़े के लोग जाग रहे थे।

गोकळें का घर नीचे वाले बाड़े में है। उसने नल का कनक्सन नहीं लिया है। वह सार्वजनिक नल से ही पानी भरती है। सार्वजनिक नल उसके घर से थोड़ा दूर है। गोकळें भी सभी के साथ जाग रही है। उसका पति पाँच साल पहले ही गुजर गया था। तीन बच्चे हैं.....। वे भी सब की सब लड़कियाँ.....। गोकळें बिस्तर लेकर ओसारे में आ गई। तीनों के बिस्तर लगा दिए। खुद आँगन में चबूतरे पर बैठ गई। पान खाने का बटुआ खोला। सुपारी निकाली और खाने लगी।

"नल में अभी तक पानी नहीं आया। पहले से ही नल के पास बर्तन रखना ठीक होगा।" यह सोचकर गोकळें घड़ा और गागर लेकर नल की ओर चल पड़ी। वहां पहुँचकर देखा कि उसकी पड़ोसिन आबडू अपना बर्तन कतार में लगा रही थी। गाँव की अन्य औरतों ने भी अपना–अपना बर्तन नल के पास रख दिया था।

"बज पड़े इस नल को। पाँच दिन हो गए घर में पानी की एक बूंद भी नहीं। पानी के बिना क्या हम जी सकते हैं? भाड़ में गई सरकार! एक दिन टैंकर भेजकर हमारे आँखों को पानी लगाया..... अभी कहीं कुछ भी नहीं।" गोकळें को आते देखकर आबडू भनभना रही थी।

"नल को क्यों गाली दे रही है? पानी आएगा तो गिरेगा ही। हमें

अपने–अपने कर्मों को गाली देनी चाहिए। गाँव में नल का पानी आने के पहले क्या हम लोग कुँए का पानी नहीं पीते थे।"

"हाँ! तुम ठीक कह रही हो गोकळें मौसी। मृग नक्षत्र में बारिश समय पर नहीं आई तो सारे कुएँ सूख जाते थे लेकिन अपनी खडपी बावड़ी कभी नहीं सूखती थी। उसमें साल भर पानी रहता था। दूसरे गाँव के लोग भी आकर पानी भरते थे।" आबडू की स्मृतियाँ झरनों के सदृश झरने लगीं।

"रास्ता बावड़ी को खा गया। उसके नीचे चली गई। अभी उसके ऊपर गाड़ियाँ दौड़ रही है। मैंने कहा था कि बावड़ी मत पाटो। किसी ने मेरी नहीं सुनी। इसके लिए मैं अकेली लड़ी थी।" गोकळें ने अपना दुखड़ा रोया। कापर्शे गाँव की खडपी बावड़ी बहुत पुरानी थी। गर्मी के दिनों में मंदिर का पोखरा भी सूख जाता था। लोग उसमें से नारियल की कट्टी से पानी भरते थे। गाँव में और घर आ गए। पानी की किल्लत होने लगी। गाँव को पानी चाहिए। पानी का प्रश्न खड़ा हो गया। पंचायत बुलाई गई। पोखरा साफ करना चाहिए। गाँव ने फैसला लिया। तदनुसार पोखरा साफ किया गया। फिर भी पानी की परेशानी बनी रही। पंचायत पुनः बुलाई गई। गाँव इकट्ठा हुआ। पानी नहीं है। अब क्या किया जाए....? सभी सोचने लगे। उसी समय गाँव का बूढ़ा चरवाहा सोम खड़ा होकर बोला,

"गोठण (गोस्थल) के पास औदुंबर का पेड़ है। उसके समीप कुआँ खोदा जाए। मुझे विश्वास है कि वहाँ दस–पंद्रह हाथ के नीचे पानी जरूर मिलेगा।" सभी ने उसकी बात मानी। कुआँ खोदने का दिन तय हो गया। फावड़े, कुदाल, पिकाश आदि लेकर गाँव के लोग गोठण के पास जमा हो गए। जगह तय हो गई। खुदाई शुरू हो गई। धीरे–धीरे मिट्टी बाहर आने लगी। पंद्रह–बीस दिन लगातार काम चलता रहा। अभी जमीन को पिकाश नहीं लग रहा है। नीचे पत्थर आ गया..... सब निराश हो गए।

"बूढ़े चरवाहे की बात सही नहीं निकली।" पूरा गाँव उसे दोष देने लगा.....। सोमा खुद कुएँ में उतरा। पिकाश लेकर पत्थर तोड़ने लगा.... गाँव के लोगों ने उसका साथ दिया। चार–पाँच हाथ पत्थर फोड़ते ही चमत्कार हुआ। खडपी बावड़ी से झरना फूट पड़ा। पानी आने लगा। लोग झूम उठे...। सोमा की बात सही निकली। खापड़ी कुआँ तैयार हो गया। औदुंबर पेड़ के पास कटहल के तीन–चार पेड़ भी थे। जहाँ से सातेरी का मंदिर दिखाई देता था। कुएँ के सामने से वहाँ तक पगडंडी जाती थी। वर्षा के दिनों

में कुआँ लबालब भर जाता था। गाँव के लोग हाथ से पानी निकालते थे। गर्मी के दिनों में खडपी बावड़ी का पानी नीचे चले जाने से तलहट साफ दिखाई देने लगता था। पानी इतना ठंडा हो जाता था कि आँखों पर छपकीं मारने पर आँखें तर हो जाती थीं। पानी पीने से राहगीरों की आत्मा तृप्त हो जाती थी। गाँव के लोग वहीं नहाना पसंद करते थे।

कुएँ के समीप कटहल के नीचे गाएँ आकर बैठती थीं। चरवाहे कुएँ का पानी निकालकर उन्हें पिलाते थे। जब मवेशियों का त्योहार आता तो चरवाहे कुएँ के चारों ओर झाड़–पोंछ कर सफाई करते थे। यह काम तीन–चार दिन पहले ही शुरू हो जाता था। वे भिल्लेमाड (नारियल के पेड़ जैसी झाड़) की लंबी–लंबी पत्तियों और पताकों से मंडप एवं कुएँ का पूरा परिसर सजाते थे। गाय–भैंसों को नहलाते। सींगों को रंगकर उसमें झालर लटकाते। गले में गेंदों का हार। मंडप में बालकृष्ण मूर्ति की स्थापना। बाद में भजन–कीर्तन आदि से कुएँ का संपूर्ण परिसर जीवंत हो जाता था.....।

कई वर्षों के बाद कापशें गाँव में नल का पानी आया। औरतें तरह–तरह की बातें करने लगीं। एक ने कहा कि पानी में दवा की बास आ रही है। दूसरे नें इसे खाना पकाने और पीने लायक नहीं समझा इसलिए गाँव की औरतों ने नल का पानी इस्तेमाल करना बंद कर दिया। वे उससे केवल कपड़ा–बर्तन धोती थीं। खाना पकाने और पीने के लिए सिर्फ बावड़ी का पानी। इस तरह एक–दो साल बीता। उसके बाद सब बदल गया..... धीरे–धीरे कुएँ पर जाना कम होने लगा। बावड़ी में औदुंबर की पत्तियाँ गिरती हैं.....। मेंढक मर गया है .....। अब पानी निकालने को नहीं होता.....। औरतें तरह–तरह के बहाने बनाने लगीं।

गोकळें ने बावड़ी नहीं छोड़ी। खाना पकाना, बर्तन साफ करना, कपड़े धोना आदि सारा काम वह कुएँ के पानी से ही करती थी। उसे बावड़ी पर जाना अच्छा लगता था। एक दिन गोकळें कुएँ से पानी निकाल रही थी। तभी ऊपर वाले बाड़े की कस्तूरी ने उसे पुकारा, "गोकळें, तुम एक न एक दिन कुएँ में जरूर गिरोगी..... नल होने के बाद भी दोपहर के समय कुएँ पर जान क्यों दे रही हो?"

"नल का पानी जाने पर तुम लोगों को समझ में आएगा। हमारा अपना कुआँ ही अच्छा है।" गोकळें बोली। कस्तूरी ने फिर कुछ नहीं कहा। वह चुपचाप अपने रास्ते चली गई।

कुछ साल बीतने के बाद कुएँ के अंदर और बाहर झाड़ उग आए। उनकी पत्तियाँ पानी में गिर कर सड़ने लगीं। एक तरफ से कुएँ की जगत ढह गई। एक–एक कर पत्थर कुएँ में गिरने लगे। उसमें से कई तो लोगों के घरों में चले गए। धीरे–धीरे बावड़ी बैठ गई... अब कुएँ में गायें गिरेंगी... खेलते–खेलते बच्चे गिरेंगे...। गाँव वालों को अपने बच्चों और मवेशियों की चिंता होने लगी।

"कुएँ की जगत फिर बाँधनी चाहिए। उसे साफ करना भी जरूरी है।" गोकळें ने गाँव के लोगों से विनती की लेकिन किसी ने उसकी नहीं सुनी।

"दशहरा, काली पूजा और शिंगमोत्सव के अवसर पर मंदिर तक गाड़ियाँ जानी चाहिए।" गाँव के लोगों ने माँग की। उस साल पंचायत ने मंदिर तक रास्ता बनाने का काम हाथ में लिया। "मंदिर के पास जाने वाला रास्ता चौड़ा होना चाहिए।" मुखिया के लड़के नारायण ने अपनी बात रखी।

"यह भठा हुआ कुआँ रास्ते में आ रहा है। चहारदीवारियों की झाड़ों ने आधा रास्ता घेर लिया है। कुआँ पाटना चाहिए। बाड़ का झाड़ काटना चाहिए।" ठेकेदार ने सुझाव दिया। बावड़ी पाटने और झाड़ काटने का निर्णय लिया गया। ठेकेदार ने कुआँ पाटा। झाड़ काटा। रास्ता चौड़ा किया। गाड़ियाँ मंदिर तक पहुँचने लगीं।

गोकळें की आँखों के सामने अतीत का संपूर्ण चित्र परदे की भाँति एक–एक कर गुजरने लगा। तेरह साल पहले की यादें तरोताजा हो उठीं। वह कतर्व्यविमूढ़ सी हो गई। नल में पानी आने से पहले ही उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली....."आबडूबाई! लगता है, नल में पानी नहीं आएगा। काफी रात बीत गई। घर चलें। अब कितनी देर तक जगेंगे।" गोकळें ने अपने आप को संभालते हुए साड़ी का पल्लू आँखों से लगाया।

"सभी घर चले गए। मैं भी चली। यहाँ रह कर क्या करूँगी? मुझे नींद आ रही है।" यह कहते हुए आबडू भी उसके पीछे–पीछे घर की ओर चल पड़ी।

उस रात नल में पानी नहीं आया। सुबह होते ही पानी के दो टैंकर आ गए। एक ऊपर के बाड़े में रुका तो दूसरा नीचे के। कुछ देर बाद विधायक गाड़ी से आया। सरपंच स्कूटर से पहुँचा। पंच दौड़ता हुआ आया। वहाँ के कार्यकर्ता आए। गाँव की औरतें बर्तन लेकर टैंकर की ओर दौड़ पड़ीं। विधायक गाड़ी से नीचे उतरा। आदमी और बच्चे उसे घेर कर खड़े हो गए। किसी ने जोर से नारा लगाया, "विधायक जिंदाबाद! जिंदाबाद!" दूसरी तरफ भीड़ से आवाज आई "विधायक जिंदाबाद! जिंदाबाद!" सुर में सुर मिल गए।

ग्रीष्म ऋतु के बाद जैसे बादलों की गड़गड़ाहट के साथ वर्षा होती है उसी प्रकार वहाँ नारों की बरसात होने लगी।

आज टैंकर से जी भर कर पानी मिल रहा है। गाँव की औरतें हौले–हौले पानी भरते हुए बहुत खुश थीं। कई औरतें पानी घर ले जाकर फिर दौड़ती हुई वापस आ रही थीं....।

गोकळें के ऊपर इन सारे होहल्लों का जरा भी प्रभाव नहीं पड़ा। उसने फावड़ा और पिकाश उठाया। हाथ में तसला लिया। वह घर से बाहर निकली। रास्ते पर आई और खडपी बावड़ी की ओर चल पड़ी। औदुंबर पेड़ के पास पहुँची। वहाँ खड़ी होकर उसने इधर–उधर नजर दौड़ाई। कुएँ के स्थान का जायजा लिया। गोकळें ने अपनी साड़ी के पल्लू को कमर में कस कर खोंसा। "हाँ, हाँ यह वही जगह है, मेरे खडपी बावड़ी की। यह बावड़ी फिर से खोदनी है। मुझसे जितना हो सकेगा मैं उसकी माटी बाहर निकालूँगी।.....' यह कहते हुए गोकळें ने अपनी पूरी ताकत लगा कर पिकाश जमीन पर दे मारा.....

***

कविता दम नहीं घोटती
वरन् वह देती है स्वच्छ प्राणवायु
उन सभी को
जिनकी साँस फूलने लगी है।

कुँअर बेचैन